## लिपि के प्रकार

1. उत्तर भारतीय लिपि (Completed)
2. दक्षिण भारतीय लिपि(तेलुगु-कन्नड, ग्रन्थ, कलिंग और तमिल लिपि)
3. पूर्व भारतीय लिपि
4. पश्चिम भारतीय लिपि
5. वाकाटक लिपि

### दक्षिण भारतीय लिपि

दक्षिण भारतीय शैली में वर्णों में भंग एवं गोलाई का विशेष रूप से प्रयोग किया गया है। ये वर्ण त्वरा एवं अनवरतता से लिखे गए हैं। कोमल धरातल पर त्वरा एवं अनवरतता से लेखन के कारण ही वर्णों ने गोलाई का रूप प्राप्त कर लिया। तथापि कोणीय वर्ण रचना भी उपलब्ध होती है। फिर भी गोलाई के रूप को ही कोणीय स्वरूप दे दिया गया है। मध्यप्रदेश से लेकर दक्षिण तक इस शैली के उदाहरण विभिन्न रूपों में उपलब्ध होते हैं।

**1. तेलुगु-कन्नड़ लिपि**- महाराष्ट्र के दक्षिण भागों- बीजापुर, शोलापुर इत्यादि क्षेत्रों में, आंध्र-प्रदेश के दक्षिणी भाग में, तमिलनाडु के उत्तर-पूर्वी भागों यथा वैल्लौर, कृष्णा, कुर्नूर, गोदावरी, विशाखापट्टनम इत्यादि क्षेत्रों में तेलुगु-कन्नड़ प्रकार की लेखन शैली का प्रयोग होता है।

पल्लवों, कदम्बों, पूर्वी तथा पश्चिमी चालुक्यों, राष्ट्रकूटों इत्यादि के अभिलेख में यह लेखन शैली प्रयोग की गई है। पांचवी शताब्दी ईस्वी में इस के प्रारंभिक लक्षण मिलने लगे। इस लेखन-पद्धति का प्रयोग चौदहवी शताब्दी ईस्वी तक उपलब्ध होता है। पाँचवी से चौदहवी शताब्दी के मध्य इसमें पर्याप्त परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होते हैं।

वर्णों में गोलाई, त्वरा से घसीट पद्धति से लेखन के स्वरूप लगभग ग्यारहवीं शताब्दी ईस्वी में इस प्रकार के लेखन पद्धती में शैली-गत विलक्षणता दिखाई देने लगी। इसमें शिरो रेखा का स्वरूप वर्गाकार है। वर्ण प्रारंभिक उदाहरणों में समकोण कम और गोलाई अधिक लिए हुए हैं। अनवरतता से लेखन किया गया है। चौदहवीं शताब्दी ईस्वी तक इस समय घटित विलक्षणता ने इसके स्वरूप को अत्यधिक प्रभावित कर दिया एवं इसका रुप ही बदल दिया। इससे यह वर्तमान तेलुगु एवं कन्नड़ लिपियों के निकट हो गयी। अतः दो भिन्न लिपियों के विकास का माध्यम बन गई।

**2. ग्रन्थ लिपि**- तमिलनाडु के उत्तरी भागों मदुरै, त्रिचनापल्ली, सेलम, तिन्नवेल्ली इत्यादि क्षेत्रों में सातवीं शताब्दी ईस्वी में एक भिन्न प्रकार की लेखन पद्धति विकसित हुई। इसका नाम 'ग्रंथ' लिपि दिया गया। इस पद्धति में लेख लिखित लिपि का प्रयोग पन्द्रहवीं शताब्दी तक पूर्ण रूपेण ग्रंथ लिपि के रूप में प्रचलित हो गया। तमिल लिपि में संस्कृत लेखन में आवश्यक पूर्ण वर्णों के अभाव के कारण संस्कृत में लेखन के लिए ग्रन्थ लिपि का प्रयोग किया गया। प्रारंभ में ग्रंथ लिपि तेलुगु-कन्नड लिपि से अत्यधिक समान रूप वाली थी। परंतु दक्षिण भारतीय लेखन शैली की विशेषताएं एवं अनुग्रह- त्वरा, अनवरतता, खड़ी रेखाएं एवं आड़ी रेखाओं में भंग देने की प्रवृत्ति ने तेलुगु-कन्नड़ लेखन-पद्धति से इसे भिन्न कर दिया। कालांतर में ग्रंथ लिपि ने मलायलम लिपि के विकास को प्रभावित किया।

**3. कलिंग लिपि-** नागरी लिपि तेलुगु-कन्नड़ लिपि एवं ग्रंथ लिपि- तीनों के मिश्रित रूप में उपलब्ध लेखन-पद्धती को **कलिंग लिपि** का नाम दिया गया है। यह वास्तव में समकालीन प्रचलित लेखन-पद्धतियों का मिश्रित रूप है। सातवीं शताब्दी से इस प्रकार के लेखन के उदाहरण मिलने प्रारंभ होते हैं। इसका प्रचलन ग्यारहवीं शताब्दी तक रहा। तमिलनाडु के गंजाम एवं चिकाकोल क्षेत्रों में इस प्रकार के लेखन का प्रकार उपलब्ध होता है। प्रारंभिक स्वरूप में इसमें चौकोर शिरा रेखाओं का प्रयोग दिखाई देता है। वर्ण समकोण

रूप में हैं। कालांतर में यह त्वरा से लिखित प्रकार के लेखन का रूप ग्रहण कर लेते हैं। वर्ण समकोण का रूप छोड़कर गोलाकार स्वरूप को धारण कर लेते हैं।

**4. तमिल लिपि-** तमिलनाडु, पश्चिमी तट, मालाबार क्षेत्रों में ग्रंथ-लिपि का प्रचलन था। इन्हीं क्षेत्रों में तमिल वर्णों के लेखन के लिए एक भिन्न लिपि उपलब्ध होती है। इसे ही **तमिल लिपि** के नाम से जाना जाता है। सातवीं शताब्दी ईस्वी में तमिल लिपि के प्रारंभिक स्वरूप के उदाहरण मिलने शुरू होते हैं। इसके वर्ण ग्रंथ लिपि जैसी है परंतु कुछ वर्णों की रचना उत्तर-भारतीय लिपियों के समान भी मिलती है।

उत्तर-भारतीय शैली के समान कुछ वर्णन की खड़ी रेखाएं नीचे से बाई ओर मोड़ी नहीं गई है। इस लिपि में वर्गों के प्रथम एवं पंचमवर्ण का प्रयोग किया गया है। भारत में सभी लेखन-पद्धतियों में संयुक्त वर्ण की अभिव्यक्ति वर्णों को एक दूसरे के ऊपर-नीचे लिखकर किया जाता है परंतु तमिल लेखन-पद्धती में वर्णों को परस्पर साथ में लिखकर अभिव्यक्त किया जाता है। तमिल लिपि के द्वारा से घसीट लेखन की प्रवृत्ति से विकसित लेखन शैली वट्टेलुत्तु के नाम से प्रसिद्ध है। इस लेखन-पद्धति का प्रयोग सातवीं शताब्दी ईस्वी से चौदहवीं शताब्दी तक उपलब्ध होता है। चोल, पाण्डय इत्यादि नरेशों के लेखों में यह घसीट लेखन शैली प्राप्त होती है। बर्नेल वट्टेलुत्तु को तमिल लिपि का पूर्व रूप मानते हैं। इसको किसी विदेशी लिपि का स्वतंत्र विकास मानते हैं। गौरीशंकर हीराचंद ओझा का मत है कि यह घसीट रूप में लिखित लिपि मात्र ही है।